

ISSN 2321 - 5704

भाषा भारती

राजभाषा प्रकाशन की वार्षिक पत्रिका

अंक 5 - वर्ष 5, मार्च 2018



राजभाषा प्रकोष्ठ
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय
सागर

भाषा भारती

राजभाषा उन्नयन की वार्षिक पत्रिका

ISSN 2321 - 5704

(वर्ष-5, अंक-5, मार्च, 2018)

संरक्षक

कुलपति

प्रो. आर.पी. तिवारी

परामर्शदाता

कुलसचिव

ग्रुप कप्तान श्री विवेक दुबे (से.नि)

सम्पादक मण्डल

प्रो. ए.एन. शर्मा

डॉ. पंकज तिवारी

डॉ. ऋतु यादव

डॉ. अरविन्द कुमार

डॉ. अनुराग श्रीवास्तव

श्री आर.के. पाल

सम्पादक

डॉ. छबिल कुमार मेहेर

सहायक सम्पादक

अभिषेक सक्सेना



राजभाषा प्रकोष्ठ

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय

सागर (मध्यप्रदेश) - 470003

दूरभाष : (07582) 265828

ई-मेल : hindicell2015@gmail.com

ओड़िया से हिन्दी अनुवाद : समस्याएँ और सम्भावनाएँ अजय कुमार पटनायक	86
साहित्यानुवाद : अनुकृति या अनुसृजन छविल कुमार मेहेर	93
भारत में महिला सशक्तिकरण अनुपमा कौशिक	108
'पृथ्वी का प्रथम स्नान' : जीवन की वापसी का आग्रह राजेन्द्र यादव	111
रचनात्मक चिंतन की सूफी ज़मीन आशुतोष	118
हिन्दी में स्त्री-लेखन के मायने हिमांशु यादव	124
निर्मला पुतुल की कवितायें : संवेदना एवं शिल्प अरविन्द कुमार	128
वर्तमान सिनेमा : सफलता, भाषा और शीर्षक पंकज तिवारी	136
सात कविताएँ पंकज चतुर्वेदी	139
दो कविताएँ दिनेश अत्रि	141
सागर से लौटते समय कुमार कृष्ण	143
तीन कविताएँ नवीन कानगो	145
समाचार अनुराग श्रीवास्तव	149

हिन्दी में स्त्री-लेखन के मायने

— हिमांशु यादव

आज के दौर में जीवन जीना बहुत ही चुनौतीपूर्ण है। हम यह रोज महसूस कर सकते हैं कि यथार्थपूर्ण ढंग से जी पाना कितना मुश्किल काम है। एक तरफ बाजारवाद और भूमण्डलीकरण की चुनौतियाँ हैं, जिनके आधार में पूँजीवाद है, तो दूसरी तरफ सामाजिक-सांस्कृतिक चुनौतियाँ हैं, जिनके आधार में धर्म और शास्त्र हैं। बाजारवाद, उपभोक्तावाद, भूमण्डलीकरण, धर्म और शास्त्र के मिले-जुले तंत्र ने मनुष्य को अमानवीय बना दिया है। इस अमानवीयता की सबसे अधिक मार दलित, स्त्री और आदिवासी समाज को झेलनी पड़ रही है। स्त्री और दलित की जमीन लगभग समान है क्योंकि दोनों ही शोषित और दमित हैं। जहाँ दलित का इश्यू (मुद्दा) जाति का है, वहीं स्त्री का मुद्दा 'जेंडर ऑफ सेक्स' है। एक तरह से कहें तो दलित का मुद्दा समाज का है तथा स्त्री का मुद्दा घर से समाज तक का है। दोनों अमानवीयता की स्थिति में जीने को अभिशप्त हैं। आदिवासी अपनी ही जमीन से विस्थापित हैं। ऐसे में दलित, स्त्री और आदिवासी लेखन की आवश्यकता को महसूस किया जा सकता है। कहना न होगा कि इसमें स्त्री की पीड़ा सर्वाधिक है क्योंकि उसकी लड़ाई घर से समाज तक सर्वत्र फैली हुई है। स्त्री के सामने 'अस्मत् और अस्मिता' दोनों का संकट है।

समाज के दो महत्वपूर्ण ध्रुव स्त्री और पुरुष हैं, जिनके इर्द-गिर्द समाज की सारी गतिविधियाँ संचालित होती हैं। स्त्री, किसी भी परिवार की महत्वपूर्ण इकाई है क्योंकि परिवार से समाज तक के सफर में उसकी बेहद जरूरी भूमिका है। बिडम्बना यह है कि इस सफर में परिवार और समाज के शीर्ष पर पुरुष विद्यमान है और वर्चस्व स्थापित किये हुए है तथा स्त्री हाशिये का जीवन जीने को अभिशप्त है। "किसी भी समाज व उसके समय की वास्तविक स्थिति जाननी हो तो उसमें स्त्री की स्थिति पर विचार करना प्रासंगिक होगा, दलित और नारी प्रश्न आज ज्वलंत विषय हैं। इनकी समस्त प्रश्नाकुलतायें मनुष्य को और अधिक मनुष्य और मानवीय बनाने के प्रयत्न हैं।" पर भारतीय साहित्य में स्त्री को जिस आचार-संहिता में बाँधने की बात कही जाती रही है, वहाँ स्त्री कैद होकर रह गई हैं। पिंजरे में बन्द इस जीवन से छुटकारा पाना उसके लिए बड़ा मुश्किल काम है। पितृसत्ता ने स्त्री को घर के भीतर कैद कर रखा है तथा बाजार और पूँजीवादी व्यवस्था ने बाहर। वह केवल वस्तु ही नहीं समझी जाती बल्कि वस्तु बेचने का माध्यम भी है। "भारतीय समाज में शुचिता की ग्रन्थि ही औरत को मनुष्य